9

प्रयाग-पथ

धूल-धानी-धूसर में जीवन की धड़कन

रेणु

सौ साल

प्रयाग-पथ

साहित्य, कला और संस्कृति का संचयन

वर्ष : 7, अंक : 1-2 (संयुक्तांक), पूर्णांक : 9 ('रेणु' विशेषांक, जनवरी-2021)

ISSN : 2395-4000

सम्पादक
हितेश कुमार सिंह

अतिथि सम्पादक
कुमार वीरेन्द्र

सह सम्पादक
डॉ. नीतू सिंह

लेज़र टाइपसेटिंग
प्रखर कम्प्यूटर्स, झलवा, प्रयागराज

मुद्रक
इण्डियन प्रेस प्रा. लि., प्रयागराज-211002

आवरण
अशोक सिद्धार्थ

मूल्य
इस अंक का : रु. 60.00 (डाक खर्च अतिरिक्त)
संस्थाओं के लिए : रु. 70.00 (डाक खर्च अतिरिक्त)
सदस्यता चार अंक : रु. 300.00 (डाक खर्च अतिरिक्त)
आजीवन सदस्यता : रु. 5000 (पाँच हजार रुपये मात्र)

सम्पर्क
353/183/2, टैगोर टाउन, प्रयागराज-211002, उत्तर प्रदेश
मोबाइल : 09452790210
ई-मेल : prayagpathpatrika@gmail.com

- सम्पादन, प्रकाशन एवं प्रबंधन पूर्णतः अवैतनिक/अव्यवसायिक
- पत्रिका में प्रकाशित विचार सम्बन्धित लेखकों के अपने हैं, सम्पादक और प्रकाशक का उससे सहमत होना अनिवार्य नहीं।
- समस्त कानूनी विवादों का न्याय क्षेत्र इलाहाबाद उच्च न्यायालय, उत्तर प्रदेश होगा।
- स्वामी-सम्पादक-प्रकाशक-मुद्रक हितेश कुमार सिंह द्वारा 353/183/2, टैगोर टाउन, प्रयागराज के लिए इण्डियन प्रेस प्रा. लि., 36, पन्नालाल रोड, प्रयागराज-02 से प्रकाशित और मुद्रित

अनुक्रम

• **अतिथि सम्पादक की क़लम से**-कुमार वीरेन्द्र

• **चिंतन-सृजन का हीरा मन** **पृष्ठ सं.**

रेणु : स्टिल लाइफ : भारत भारद्वाज 05

जाति ही पूछो रेणु की : भारत यायावर 09

रेणु तन मंडित : चिंतन की परती और सृजन की परिकथा : अविनाश कुमार सिंह 20

• **मैला आँचल : डॉक्टर की रिसर्च जारी है**

डॉक्टर की रिसर्च में असफलता : यानी मैला आँचल : नित्यानंद तिवारी 26

मैला आँचल : औपनिवेशिक शासन व्यवस्था और प्रतिरोध का स्वर : मुश्ताक़ अली 30

मैला आँचल : सबारि ऊपर मानुस सत्य : मिथिलेश 35

मैला आँचल : भारत का जातीय यथार्थ : यानी हिंद स्वराज की विडम्बनामूलक अंतर्कथा : विनोद शाही 45

मैला आँचल और उसके लोकगीत : विनम्र सेन सिंह 69

मैला आँचल : सामाजिक यथार्थ की बानगी : जितेन्द्र कुमार परमार 78

• **परती परिकथा : अँधेरे से उजास की लालसा**

परती पर वृंदावन : अब्दुल बिस्मिल्लाह 87

• **कहन का रस -दिल का मर्म -दर्द के रिश्ते उर्फ कहानी का ताना-बाना**

लाल पान की बेगम की कथा में स्त्री : मैत्रेयी पुष्पा 92

मिरदंगिया का ताप : सूरज पालीवाल 96

ठुमरी धर्मा रचनाओं में अदृश्य हिंसा की आँच : रणेन्द्र 102

रेणु की अलक्षित कहानियाँ : युग संदर्भ और कथा-दृष्टि : अरुण होता 116

चेतना और परिवर्तन की आहट है पंचलाइट : राम चन्द्र 130

गोधन को ही पंचलैट बालने आता है : रत्नेश विश्वक्षेन 135

आँचलिक संस्कारों का गुलदस्ता : तीसरी कसम अर्थात मारे गये गुलफाम : बिपिन कुमार 139

रेणु : औरतों के गोइयाँ लेखक : आशुतोष पार्थेश्वर 144

रेणु की कहानियाँ : राजनीतिक आशय : शशिभूषण मिश्र 152

रेणु की कहानियों में ईश्वर : स्मृति शुक्ल 156

• **बचपन अर्थात् जीवन का पहला रजिस्टर**

लाली लाली डोलिया में लाली रे दुल्हनियाँ : दीनानाथ मौर्य 160

• **यदि मैं लिखता यानी कल का आज**

अग्निसंचारक अर्थात् नई आग, नया इंडिया : पंकज मित्र 169

• **देखी तुम्हरी धरती : मृत्यु की उपत्यका में जीवन के अक्स**

सिसकती मनुष्यता का कोरस-ऋणजल : धनजल : धारवेन्द्र प्रताप त्रिपाठी 173

• **बतकही**

एक सजीव कविता की तरह थे रेणु : कर्मेन्दु शिशिर से आशुतोष कुमार सिंह की बातचीत 178

• **पुरखों के कठोर से**

रेणुजी का मैला आँचल : नलिन विलोचन शर्मा 184

अ नॉवेल ऑफ रूरल बिहार : मैला आँचल : शाम लाल 187

समग्र मानवीय दृष्टि : निर्मल वर्मा 190

• **देश बजरिए दृश्य**

रेणु के नाटक : शिल्प और कथ्य : चंद्रप्रकाश पांडेय 194

• **जीवन के उतार-चढ़ाव में क़लम की स्वाधीनता**

फणीश्वरनाथ रेणु : जीवन-संघर्ष और साहित्य : हितेश कुमार सिंह 196

धूल-धानी-धूसर में जीवन की धड़कन

लोकप्रिय साहित्यकार फणीश्वरनाथ रेणु का यह जन्म-शती-वर्ष (1921-2021) है। यह एक अवसर की तरह है, रेणु को बार-बार या फिर-फिर देखने-पढ़ने-समझने का महत्त्वपूर्ण अवसर। रेणु को चाहे जिस कोण से देखा-समझा जाए, देखने-समझने वाला गहरे उत्साह से भीतर तक भरे बगैर नहीं रह सकता। इसकी वजह है। असल में रेणु संपूर्ण भारतीय भाषा के ऐसे बिरले कथाकार हैं, जिनके यहाँ धूल-धानी-धूसर में जीवन की धड़कन अत्यंत गहरे पैवस्त है और जिनके स्पंदन को महसूस करना संभव है। उन्होंने परिवेश की खूबियों-खामियों को इतने खरेपन और कलात्मक सहजता के साथ रेखांकित-व्यंजित किया है कि उनमें असाधारण-साधारणता उत्पन्न हो गई है। इस अर्थ में रेणु को 'कलाकार' भी कहा-माना जा सकता है। एक ऐसा कलाकार जिसकी कृति को देखने-पढ़ने का मतलब है रूप, रस, गंध, ध्वनि आदि का स्वाद लेना, रंग-आकारों का सुंदर संयोजन देखना, 'परती' के उदास और मनहूस बादामी रंगों का अवलोकन करना और 'अंचल' की मिट्टी पर बसे इन्सानों की हरकत, दिलदारी, तंगहाली में शरीक होना।

प्रेमचंद बंबई गए रमें नहीं, रेणु बंबई गए रुके नहीं। भला मायानगरी में रेणु रुकते भी कैसे? जीवन-पर्यन्त तो वे आदमी की लड़ाई लड़ते रहे, 'कलाकार' की हैसियत से आदमी की खोज के लिए प्रतिबद्ध रहे। उन्होंने मनुष्य को सबसे बड़ा सत्य माना, विशेषकर उस मनुष्य को जिसकी जड़ें धूल-धूसरित धरती में गड़ी हुई हैं और जिसके लिए चण्डीदास कहते हों– 'सुन रे मानुष भाई/ सवार ऊपर मानुष सत्य/ ताहार ऊपर किछु नाई' और जिसे जानने-बूझने के लिए वारान्निकोफ (स्लोकोव का एकमात्र लेखक शिष्य) 'मैला आँचल' को तीन बार पढ़ता हो और पढ़कर मेरीगंज देखने की लालसा प्रकट करता हो और जिससे चिढ़कर नरोत्तम नागर लिखते हों कि 'आलोचक प्रवर 'मैला आँचल' को हल्दी की गाँठ बनाकर पसरहट्टा सजाने पर तुले हैं।'

मनुष्य सत्य को सर्वोपरि मानने के कारण रेणु अपने को 'रामकृष्णाइट' मानते हैं। वे मानते हैं कि रामकृष्ण और विवेकानन्द से बढ़कर क्रांतिकारी गाँधी के पहले इस देश में और कोई नहीं हुआ। रेणु दरिद्रनारायण की कल्पना का श्रेय रामकृष्ण और विवेकानन्द को देते हैं। वैसे तो रेणु गाँधी की व्याख्या कबीर के शब्दों में करना चाहते हैं और करते भी हैं। रेणु की एक कहानी है 'आत्मसाक्षी' (1965)। इस कहानी के

गनपत के मन में कबीर की एक पंक्ति गूँजती है– 'तेरो जनम अकारथ जाय मूरख' और फिर आगे गाँधी जी के आंदोलन से जुड़े गीत की यह पंक्ति– 'भैया, झगड़ न जाहु कचहरिया...।' यानी पूरी बात कबीर और गाँधी के बीच में आ जाती है। रेणु इससे सहमत थे कि 'अगर कबीर के बाद साधारण जनता को किसी ने उद्‌बुध किया, किसी ने एक बार झकझोरा था, तो गाँधी जी ने झकझोरा था।' यह बात दीगर है कि गाँधीवादी मूल्यों के हश्र को बावनदास ('मैला आँचल') के हश्र के साथ रेखांकित करना वे नहीं भूलते। जो पानी 'मैला आँचल' के समय कमर तक था, 'परती : परिकथा' का अंत होते-होते सिर के ऊपर से गुजरने लगा, इसका चिह्नांकन करना भी वह नहीं भूलते। 'टूटते-बिखरते सपनों की दास्तान' कहने बैठते हैं तो खुद रेणु भी स्वीकार करते हैं कि 'परती : परिकथा' के परानपुर के लुत्तो बाबू 'मैला आँचल' के फारबिसगंज के छोटन बाबू के ही ग्राम्य संस्करण हैं।

रेणु का लेखन 'आस्ते-सुस्ते' अनवरत चलता रहा, कड़कते घी में बैंगन छौंकने वालों में वे नहीं थे। हाँ, कड़कते मौसम में पटना से औराही हिंगना जाने पर वे कमर में पिस्तौल लेकर गाँव-जवार में अवश्य घूमते थे। नेपाल-क्रांति में उन्होंने कलम के बदले रायफल सँभाली थी। 'होल टाइम' साहित्य करने के पहले रेणु राजनीति करते थे, यानी पार्टी में थे - किसान मजदूरों के बीच। सक्रिय राजनीति से संन्यास लेकर भी वे ताउम्र राजनीति करते रहे या राजनीतिक मूल्यों की रचनात्मक हिफाजत करते रहे। 'मैला आँचल', 'परती : परिकथा', 'दीर्घतपा', 'जुलूस', 'कितने चौराहे' सभी राजनीतिक विचारों के ही प्रतिफल हैं। बिहार आन्दोलन में गिरफ्तार होकर जेल से लौटने के बाद 1975 में 'जन-जागरण' में साहित्यकार की भूमिका को रेखांकित करते हुए रेणु ने लिखा कि 'सच कहता हूँ, अगर इस जन-आन्दोलन से अपने को किसी तरह अलग-थलग रख पाने में सफल हो पाता या तटस्थ हो पाता अथवा मौखिक सहानुभूति प्रकट कर रह जाता तो न प्रेमचन्द ने मुझे माफ किया होता और न निराला ने।'

स्पष्ट है कि भले ही 'घोषित-अघोषित इमरजेंसी' मनुष्य की आजादी और साहित्यकार की स्वाधीन मुखरता को 'अंडरलाइन' करने की कोशिश करती रही हो, रेणु जैसे कथाकार आजाद भारत में आजादी की तलाश के लिए और मनुष्य के बुनियादी अधिकारों की हिफाजत के लिए रचनात्मक-सकर्मक जिद ठानते रहे हैं। हिन्दी की सौ वर्षीय स्मृति में रेणु एक तरो-ताजगी के साथ ऐसे कठिन समय में दाखिल हुए हैं, जब मनुष्य अपनी बुनियादी सवालों को लेकर सरे राह खड़ा है। इसलिए रेणु को आज याद करने का अर्थ इस तथ्य में ज्यादा निहित है कि लेखक साहित्य और समाज में अपनी भूमिका को पुनर्व्याख्यायित करें।

करुणाकालीन समय में रेणु को देखने-समझने में जिन विद्वान लेखकों ने हमारा सहयोग किया है, हम उनके बेहद आभारी हैं। हम पाठकीय प्रतिक्रिया का इंतजार करेंगे।

-कुमार वीरेन्द्र

(9955971358)

रेणु : स्टिल लाइफ

भारत भारद्वाज

प्रेमचंद के बाद-कथा साहित्य में फणीश्वरनाथ रेणु एक ऐसा प्रतिष्ठित एवं सम्मानित नाम है जिनकी रचनाओं के पास हमें बार-बार जाने की जरूरत महसूस होगी अपने समय सन्दर्भ का अर्थ ढूँढने के लिए और प्रेमचन्द के बाद हिन्दी प्रदेशों में ग्रामीण यथार्थ की विकसित संवेदना में बदलाव तलाशने के लिए भी। 1954 में जब रेणु का पहला उपन्यास 'मैला आँचल' निकला था तब उनकी उम्र थी 33 साल। सम्भवतः भारत में हिन्दी के किसी लेखक की पहली कृति ने पाठकों का ध्यान पहले इतना आकृष्ट नहीं किया जितना इस उपन्यास ने। यह अकारण नहीं है कि आचार्य नलिन विलोचन शर्मा ने इस उपन्यास की एक संक्षिप्त समीक्षा 'आलोचना' में लिखी थी, जिसकी न केवल पर्याप्त चर्चा हुई, बल्कि अब तक इस कृति के मूल्यांकन के लिए वह एक अनिवार्य अधार-समीक्षा मानी जाती रही है। बाद में भी रेणु ने 'परती परिकथा' जैसा उपन्यास लिखकर एक बार फिर अपने औपन्यासिक सामर्थ्य का परिचय दिया। लेकिन रेणु की लोकप्रियता का आधार उनकी 'तीसरी कसम अर्थात् मारे गए गुलफाम' और 'रसप्रिया' जैसी कहानियाँ भी हैं। वैसे रेणु ने अनेक रेखाचित्र, संस्मरण एवं यात्रा-वृत्तांत भी लिखे। सचमुच यह हिन्दी साहित्य का दुर्भाग्य है कि रेणु को लम्बी उम्र नहीं मिली। मात्र 56 वर्ष में उनका देहांत हो गया। कुल मिलाकर ढाई दशकों में फैला उनका लेखन काल भी विधाओं की विविधता से भरा पड़ा है। यह विचित्र संयोग है कि प्रेमचन्द एवं आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का निधन भी 56 वर्ष की आयु में हुआ था। लेकिन किसी भी श्रेष्ठ लेखन का निर्णय लेखक की उम्र से नहीं उसकी रचनाओं के देश-काल में अवस्थित चिन्ताओं एवं बेचैनियों से होता है। ठीक 'गोदान' की तरह 'मैला आँचल' भी हिन्दी कथा-साहित्य का शिखर है। अब भी नये रचनाकारों के लिए भारी चुनौती। कोई भी नया रचनाकार प्रेमचन्द और रेणु से टकराकर ही श्रेष्ठ साहित्य का सृजन कर सकता है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि प्रेमचन्द के बाद जिन तीन लेखकों ने हिन्दी कथा-साहित्य को बेहद प्रभावित किया शिल्प, भाषा, संवेदना एवं लोकजीवन से उनमें अज्ञेय, रेणु एवं निर्मल वर्मा की लेखन-शैली के चिह्न समकालीन रचनाकारों में आज भी दृष्टिगत होते हैं।

यदि आरम्भ में 'मैला आँचल' को आँचलिकता से जोड़ा गया तो रेणु के आग्रह के कारण ही। अन्यथा यह उपन्यास भी भारत के एक अंचल विशेष के लोगों और उनके संघर्षों का चित्रण ही है। रेणु हिन्दी के समालोचक डॉ0 रामविलास शर्मा के मनपसन्द लेखक कभी नहीं रहे। उनका एक लेख 'प्रेमचन्द की परम्परा और आँचलिकता' शीर्षक से उनकी पुस्तक 'आस्था और सौन्दर्य' में संकलित है जिसमें उन्होंने प्रेमचन्द

की परम्परा से 'रेणु' को आँचलिकता के कारण अलगाते हुए टिप्पणी की है-''....उनकी (प्रेमचन्द) रचनाएँ पढ़ने पर सहसा यह बोध नहीं होता कि हम हिन्दी भाषी प्रदेश के किसी अंचल विशेषज्ञ के बारे में ही पढ़ रहे हैं। उनके पात्रों में आँचलिकता से अधिक हिन्दुस्तानीपन अथवा हिन्दीपन है। विभिन्न अंचलों के पाठकों को लगता है कि प्रेमचन्द ने उन्हीं के यहाँ के किसानों के बारे में लिखा है।....विषय-वस्तु और चित्रण के इस असाधारणीकरण द्वारा प्रेमचन्द एक विशाल पाठक वर्ग को अपना सके, आँचलिकता के साथ जो अटपटापन लगा हुआ है, वह उनमें नहीं है।'' डॉ0 शर्मा के अनुसार आँचलिकता का अटपटापन 'मैला आँचल' की सीमा है। पहली बात तो यह है कि यदि रेणु ने स्वयं इस उपन्यास को 'आँचलिक' संज्ञा से विभूषित न किया होता तो यह विवाद ही नहीं उठता। फिर 'स्थानीयता' किसी भी लेखक का दुर्गुण या सीमा कैसे हो सकती है। बल्कि किसी भी लेखक के अनुभव की पूँजी का स्रोत तो अन्ततः स्थानीयता ही होती है। इसी से उसके लेखक की निजता की पहचान होती है। फिर 'मैला आँचल' में तो गाँव का किसान भी है और उसका संघर्ष भी। दूसरी बात क्या प्रेमचंद के उपन्यास या कहानियाँ पढ़ने से उसकी स्थानीयता का बोध नहीं होता। फिर रेणु तो प्रेमचन्द के बाद हुए इसलिए उनमें हिन्दी कथा-साहित्य का विकास भी होगा और नया ग्रामीण यथार्थ भी। क्या टालस्टाय के 'युद्ध और शान्ति' में रूस के जार के शासन में वहाँ के किसानों की दुर्गति का वर्णन नहीं है? आगे डॉ0 शर्मा ने इस उपन्यास पर यह आरोप लगाया है कि 'उसकी चित्रण-पद्धति यथार्थवाद से अधिक प्रकृतवाद के निकट है।' प्रकृतवाद और यथार्थवाद का फर्क यहाँ स्पष्ट नहीं है। बल्कि जब यह लेख लिखा गया था तब तक हिन्दी में 'यथार्थवाद' का स्वरूप स्पष्ट नहीं था। उन दिनों डॉ0 शर्मा आगरा से खुद एक आलोचना पत्रिका 'समालोचक' का संपादन कर रहे थे। उन्होंने तभी पत्रिका का फरवरी 1958 में 'यथार्थवाद' विशेषांक निकाला था। इसमें प्रकाशित लेखों में यथार्थवाद का पर्यायवाची शब्द है 'वास्तववाद'। इस तरह यह स्पष्ट है कि यथार्थवाद पद का सही अर्थ तब तक स्थिर नहीं हुआ था। इसी लेख में फिर आगे वे स्वीकार करते हैं कि 'मैला आँचल में एक नयी चीज है, लोक-संस्कृति का वर्णन।....इसके साथ कथा कहने की उसकी नयी पद्धति है।' लेकिन फिर भी उनको लगता है कि 'कथाशिल्प की इन विशेषताओं में 'मैला आँचल' का लेखक प्रेमचन्द की परम्परा से दूर जा पड़ा है।' डॉ0 शर्मा का अन्तिम निष्कर्ष है- 'मैला आँचल' तक प्रेमचन्द की परम्परा के कुछ निशान बाकी थे, 'परती परिकथा' तक आकर मिट जाते हैं और रह जाता है इलियट का शुद्ध प्रयोगवादी 'वेस्टलैंड'। कहने की जरूरत नहीं कि परम्परा कभी जड़ या रूढ़ नहीं होती और असली लेखन परम्परा से विद्रोह कर ही किया जाता है। प्रमाण है 'दूसरी परम्परा की खोज'। यह परम्परा कविता में ही नहीं है, कथा साहित्य में भी है। डॉ0 शर्मा की पसंद की अपनी सीमाएँ हैं- वृंदावन लाल वर्मा और अमृतलाल नागर। वैसे भी कथा-साहित्य कभी डॉ0 शर्मा की रुचि का क्षेत्र नहीं रहा। पत्र-पत्रिकाओं के दबाव में ही जब तब और बहुत कम उन्होंने कहानियों या उपन्यासों पर लिखा। बेशक, 'प्रेमचन्द' (1941) अपवाद हैं।

रेणु का एक बेहद दिलचस्प लेकिन मार्मिक रेखाचित्र है 'स्टिल लाइफ' जिसका रचनाकाल 1957 है और जो अब रेणु रचनावली के साथ 'फणीश्वर नाथ रेणु : चुनी हुई रचनाएँ-खंड-2 (संपादक-भारत यायावर, प्रकाशक-वाणी प्रकाशन, 21-ए, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, मूल्य रु. 150/-) में संकलित है। अपनी बीमारी के दौरान प्रायः रेणु को अस्पताल में भर्ती होना पड़ता है। इसलिए अस्पताल-जीवन एवं कार्यशैली का उनके पास विपुल और विलक्षण अनुभव है। बल्कि यहाँ उनका 'देखना' उस देखे हुए को गहराई से अनुभव करना भी है जिसकी त्रासद परिणति मनुष्य के होने का यथार्थ का विडम्बना में

बदलना होता है। अपना नाम खोकर बेड नम्बर में बदलता जिन्दा आदमी मृत्यु के बाद 'क्वेश्चन पेपर' (मेडिकल के विद्यार्थियों के लिए) में किस तरह बदल जाता है, इसका जीवन्त लेकिन साहसिक दृश्य इस रेखाचित्र से सामने आता है।

आरम्भ–

'अस्पताल में दाखिल होते ही आपका नाम बदल जाता है। आप अपना नाम खोकर किसी नम्बर के नाम से मशहूर हो जाते हैं। बेड नम्बर 5 को 'सीपी डायट' चलेगा, नम्बर 3 को 'एनिमा' देना है, नम्बर 12 का 'ब्लड' लेना है। नम्बर 6 को 'बैकरेस्ट' लगा दो।

....मैं बेड नम्बर 1 था। लगातार चौदह महीने तक अस्पताल में पड़े रहने के कारण मेरा यह नाम 'परमानेण्ट-सा' हो गया था। आज भी कभी काम से अस्पताल जाता हूँ, तो वार्ड-कुली हँसकर सलाम करते हुए कहता है- बहुत दिनों के बाद इधर आना हुआ-एक नम्बर बाबू! इस रेखाचित्र के केन्द्र में- 'लेकिन उस बार 4 नम्बर बेड पर एक ऐसा रोगी आकर अपनी याद छोड़ गया-जिसे अभी तक नहीं भूल सका हूँ।' अस्पताल में भर्ती होने के बाद पड़ोसी रोगियों में खुद रोगी की दिलचस्पी कम नहीं होती। बल्कि, किसी रोगी की मनः स्थिति, उसके बुखार का तापमान बहुत कुछ आसपास की हलचलों से निर्धारित होता है। हम विवश होकर सब कुछ देखते रहते हैं।

लेकिन लेखक की स्मृति में बेड नम्बर 4 का रोगी अटक गया क्योंकि 'आउटडोर से स्ट्रेचर पर लेटकर आया, कुलियों ने बेड पर लिटा दिया और वार्ड-नर्स ने बुखार जाँचकर 98.5 पर एक गोल बिन्दी लगा दी। 98.5 पर शरीर का तापमान।'

....लेकिन बेड नम्बर 4 को लाकर 'आउट डोर' के कुलियों ने जिस तरह लिटा दिया- लेटा रहा। न रोया, न चिल्लाया। कराहने की आवाज भी नहीं सुनायी पड़ी उसकी'।

रेणु ने बीच में अस्पताल में भर्ती रोगियों के सम्बन्धियों द्वारा अस्पताल कर्मचारियों को विशिष्ट लोगों से जोड़कर धमकियों का भी बेहद दिलचस्प वर्णन किया है।...'नर्स ड्यूटी-रूम में जाकर दूसरी नर्सों से कहती है- 'अरी प्रमिला! 16 नम्बर पर एक 'पार्टी पेशेंट' आया है। बड़ा कानून बघार रहा है। होशियार रहना— दिलफेंक.....! दूसरी नर्स जवाब देती है-' ये पार्टी वाले रोगी बड़े उत्पाती होते हैं, लेकिन किताबें अच्छी-अच्छी लाते हैं साथ में। फिल्मफेयर....'

अस्पताल के वार्ड में भर्ती रोगियों के इर्द-गिर्द (कैमरा घूमता टिका रहता है) बेड नम्बर 4 पर। क्यों कि 'बेड नम्बर 4 ने ऐसा कोई उत्पात नहीं किया। उसने डाक्टरों को परेशान नहीं किया, नर्सों को सरपट नहीं दौड़ाया और न वॉर्ड के कुलियों को कॉल बुक लेकर बड़े डॉक्टरों के पास भिजवाया। 98.5 डिग्री बुखार अपने टेम्परेचर चार्ट पर लेकर वह लेटा रहा-लाल रेखा से नीचे एक काली बिन्दी!!'

अगला दृश्यः

'चार घण्टे के बाद, डायरेक्शन बुक हाथ में लेकर वार्ड-नर्स कोई टेबलेट बाँटने आयी। टेबलेट और दवा बाँटने के समय, नर्स की पगध्वनि छंद और ताल में बँधी हुई सुनायी पड़ती है-खुट-खुट, खुट-खुट -बेड नम्बर दो...मुँह खोलो...आँ करो...निगल जाओ...ठीक है ...खुट-खुट, खुट-खुट-बेड नम्बर 3 मुँह खोलो...आँ करो...।' रेणु कवि भी थे। इसलिए नर्स की पगध्वनि छंद और ताल में बँधी सुनाई पड़ती है। वार्ड का पूरा दृश्य आँखों के सामने आ जाता है यहाँ।